

सागर की लहरें

(कविता-संग्रह)

प्रो. वीरसागर जैन

प्राक्कथन

आज से लगभग 30 वर्ष पहले, जब मैं मेरठ विश्वविद्यालय के खतौली कॉलेज में हिन्दी का प्राध्यापक था, बहुत कविताएँ लिखा करता था। वहाँ हम कवि-सम्मेलन भी करते रहते थे, जिसका संचालन भी प्रायः मुझे ही करना होता था। किन्तु उसके बाद मैं दिल्ली आ गया और दर्शनशास्त्र पढ़ने में डूब गया। कविताएँ धरी रह गईं।

किन्तु अब, जब सारा देश लॉक-डाउन में रुक गया, महीनों तक घर में ही बैठना पड़ा, तो पुरानी फ़ाइल फिर से हाथ लग गई। उसमें मैंने देखा कि मैंने अपनी कविताओं का संग्रह कर रखा है और आश्चर्य हुआ कि उस पर शीर्षक भी लिखा हुआ है- 'सागर की लहरें'। मैंने उसे फिर से पूरा पढ़ा और उसमें से बहुत-सी कविताओं को अच्छी न जानकर हटा दिया। फिर भी कुछ कविताएँ बच गईं। यद्यपि ये भी मुझे बहुत अच्छी नहीं लग रही थी, फिर भी मैंने सहज ही उनको टाइप कराकर यह संग्रह बना लिया है। संग्रह का शीर्षक भी अभी वही रहने दिया है- 'सागर की लहरें', क्योंकि अच्छा लग रहा है। इस संग्रह में मैंने अपनी संस्कृत-प्राकृत की कविताएँ भी जोड़ दी हैं जो मैंने दिल्ली आने के बाद लिखी हैं।

इस प्रकार मेरा यह कविता-संग्रह भी आपकी सेवा में प्रस्तुत हो रहा है। यदि कुछ ठीक हो तो आनन्द लीजिए।

- वीरसागर जैन

अनुक्रम

प्राकृत-काव्य	रचनाकाल	पृष्ठसंख्या
1. बाहुबलि-त्थोतं	2006	
2. बाहुबलिस्स पूयणं	2006	
3. आरदी बाहुबली सामिणो	2006	
4. देव-सत्थ-गुरु- वंदणा	2002	
5. अरिहंतो तुह जणगो (लोरी)	2002	
संस्कृत-काव्य		
1. नित्यं ध्यायन्ति योगिनः		
2. प्रकीर्णकाः		
3. मोह-वर्णनम्		
हिन्दी-काव्य		
1. महावीराष्टक स्तोत्र	1990	
2. पार्श्वनाथ-पूजा	1995	
3. भरत-स्तुति	2000	
4. तत्त्वज्ञान दोहावली	1993 से.....	
5. जिनवाणी अमृतवाणी	2001	
6. छोटा-सा मन्दिर बनाएँगे	2010	
7. कल मैंने इक सपना देखा	2002	
8. जीवन मैं करिये मत पाप	1993	
9. पंचेन्द्रिय विषयों से बचना	1993	
10. तुम नित्य निरन्तर काम करो	1993	
11. पहले मन से तौलो / चींटी	1994	
12. उस पर कोई ध्यान न दो	1994	
13. एक कैसेट की अभिलाषा	1993	
14. हम बच्चे हैं तो क्या हुआ	1993	
15. सब ऐसे बनते भगवान	1987	
16. आत्मा का हित होगा	1993	
17. आत्म-परिचय	1995	
18. जिनागम	2001	
19. छायानुवाद (प्राकृत-संस्कृत-काव्यों का)	1993 .	
20. जिनवाणी शतक (मुक्तक-संग्रह)	1993	

बाहुबलिस्स पूयणं

(ठवणा)

रिसहदेवस्स जो आसी, सुदो धीरो महातवी ।
णामेण बाहुबली किंतु, णाण झाण बली महा ॥
अम्हे वंदामि भावेण, हे पहु ! एत्थ आयह ।
मज्झ हिदयम्हि हे जिण ! णिच्चमेव वसह वसह ॥

(अट्ठगं)

णीरं जलं समप्पामि, जीवणस्स विसुद्धि ए ।
णीरसम जीवणं दिंतु, बाहुबली जिणेस्सर ॥ जलं ॥

चंदणं सीयलं लोए, चंदणादपि चंदमं ।
आदस्स सीदलतामिच्छे, बाहुबली जिणेस्सर ॥ चंदणं ॥

लोए सव्वं खणभूदं, णत्थि अक्खय किंचिवि ।
तम्हा अक्खयपदमिच्छे, बाहुबली जिणेस्सर ॥ अक्खदं ॥

पुप्फं मोहस्स लिंग त्थि, तुम्हे मोहस्स णिज्जिदा ।
हं पि मोहं खयं णेमि, बाहुबली जिणेस्सर ॥ पुप्फं ॥

भोयणं वंजणं किं पि, णिच्छयेण ण कारणं ।
तम्हा णाणं सदा पेयं, बाहुबली जिणेस्सर ॥ णेवज्जं ॥

दीवेण एदेण किं होदि, णाणदीवं पयासगं ।
णाणदीवं पहु दिंतु, बाहुबली जिणेस्सरं ॥ दीवं ॥

धूवं तुज्झो समप्पामि, अट्ठकम्मविणासगं ।
डङ्गिता कम्म धम्ममायादि, बाहुबली जिणेस्सर ॥ धूवं ॥

फलेण पूजेमि हे जिणवर, फलं किं चि ण याचमि ।
महामोक्खफलं दिंतु, बाहुबली जिणेस्सर ॥ फलं ॥

लोए अघ्घं ण हि किं चि, अघ्घं पहु तुह देसणं ।
तं तु हिदये धरणिज्जं, बाहुबली जिणेस्सर ॥ अघ्घं ॥

(जयमाला)

हे रिसहपुत तुह बाहुबली, सुणंदा देवि य मादु भली ।
भरदेस्सर चक्की बंधु तुह, बहिणी बंभी सुंदरी य सुणह ॥1॥

हे तक्खसिला -णिव बाहुबली, हे पोयणपुर-णिव बाहुबली ।
जय कम्मे सूरा बाहुबली, जय धम्मे सूरा बाहुबली ॥2॥

अहिमाणमेरु हे बाहुबली, चक्कीमयभंजण बाहुबली ।
हे दिट्ठीजुद्ध जय बाहुबली, हे जल्लजुद्ध जय बाहुबली ॥3॥

जय मल्लजुद्ध हे बाहुबली, पुण धम्मजुद्ध जय बाहुबली ।
हे जगजेदा पहु बाहुबली, पुण आदविजेदा बाहुबली ॥4॥

णिस्सल्लो मल्लो बाहुबली, देहादिविरत्तो बाहुबली ।
वेरग्गमुत्ति जय बाहुबली, जय महातवस्सी बाहुबली ॥ 5 ॥

जय तिहुवणतिलयं बाहुबली, जगदस्स अहारो बाहुबली ।
जय संतिकंतिजुद बाहुबली, जय संतिकंतिपद बाहुबली ॥6॥

बाहुबली णिच्छएण बली, लोए ण हि अण्णो को वि बली ।
ण हि बाहुबली तुह आदबली, तुह णाणबली तुह झाणबली ॥7॥

तुह लोए मंगल बाहुबली, तुह लोए उत्तम बाहुबली ।
तुह लोए सरणं बाहुबली, पणमउं चरणं तुह बाहुबली ॥8॥

तुह णंतबली णिग्गंथबली, झाणाणंतर केवली सु बली ।
जय सिद्धसिला णिव बाहुबली, जय जय जय जय जय बाहुबली ॥9॥

हं पणमउं पद तुह बाहुबली, हं पि होस्सामि बाहुबली ।
जो झायदि मणसा बाहुबली, सो होस्सदि णिच्छय बाहुबली ॥10॥

इयं बाहुबली पूया, जो पइदिणं पढिज्जदि ।
विणस्सदि सव्वदुक्खाइं, सव्वसुक्खं य पावदि ॥

आरदी बाहुबली सामिणो

ॐ जय बाहुबली भगवो, सामि जय बाहुबली भगवो।
आदबली जय णाणबली जय, झाणबली भगवो ॥टेक॥

रिसहदेवसुद तुम्हे आसी, माद सुणंदा जी।
सुदतियबंधु अण्ण परिपुरजण, सव्वं भिण्ण गिणो ॥1॥

तुह देहादो भिण्ण णाणमय, चेदणतच्च मणो।
रागरोस परिहरिदा, तम्हा पूज्ज अहो ॥2॥

दिट्ठीमल्लजलजुद्धे, भरदेस्सर विजिदो।
धम्मजुद्ध किय रागरोस पुण, तुम्हेहि विजिदा ॥3॥

कम्मे सूरा धम्मे सूरा, मुणिदिक्खा धरिआ।
धम्मचक्की मुणि घोरतवेण हि, केवलणाण जिणो ॥4॥

सव्वकम्मरय चूरिय, पढमं मोक्ख गओ।
सव्वसुरासुरवंदिद, तिहुवणतिलय अहो ॥5॥

गोम्मटेस पडिमा पहु तुज्झ, चामुंडराय करी।
भावभक्तिगुण धारिय, अम्हे णमण करी ॥6॥

विस्ससंति हो आदसंति हो, हे पहु बाहुबली।
बोहिलाह हो, सुगइगमण हो, अम्हे सरण गही ॥7॥

अर्थ- बाहुबली भगवान् की जय हो, बाहुबली स्वामी की जय हो । वे वस्तुतः आत्मबली हैं, ज्ञानबली हैं और ध्यानबली हैं। उनकी जय हो।

हे भगवान् बाहुबली ! आप प्रथम तीर्थंकर ऋषभदेव के पुत्र हो, आपकी माता का नाम सुनन्दा है, परन्तु वस्तुतः आपने माता, पिता, स्त्री, पुत्र आदि सर्व परिजन-पुरजनों से स्वयं को अलग कर लिया है और स्वयं को देहादि से भी भिन्न ज्ञानमय चैतन्य तत्त्व समझकर समस्त रागद्वेषादि भावों का त्याग कर दिया, इसलिए आप पूजनीय माने जाते हैं।

हे बाहुबली ! आपने दृष्टियुद्ध, जलयुद्ध और मल्लयुद्ध में भरतचक्रवर्ती को जीता था और बाद में धर्मयुद्ध में भी अपने समस्त रागद्वेषादि भावों को भी जीत लिया था। आप 'कम्मे सूरा' ही नहीं, 'धम्मे सूरा' भी हो गये। मुनिदीक्षा लेकर धर्मचक्रवर्ती बन गये। घोर तप करके आपने केवलज्ञान को प्राप्त कर लिया।

हे भगवान् बाहुबली ! इसके बाद आपने सर्व शेषकर्माँ को भी क्षय करके मोक्ष पद को प्राप्त कर लिया। आप इस युग के सर्वप्रथम मोक्षगामी बन गये। समस्त सुरासुरेन्द्रों ने आपकी वन्दना की ओर आप त्रिभुवन-तिलक हो गए।

हे प्रभो ! आपकी जो विशाल अनुपम प्रतिमा महाराज चामुंडराय ने बनवाई है उसे हम भावभक्ति से परिपूर्ण होकर प्रणाम करते हैं और कामना करते हैं कि सम्पूर्ण विश्व में शान्ति हो, हमें भी आत्मशान्ति मिले, बोधिलाभ हो और समाधिपूर्वक सुगतिगमन हो ।

प्राकृत भाषा में लोरी

अरिहंतो तुह जणगो, जणणी सुहदा य तुज्झ जिणवाणी ।
हे मम बंधु ! जाणदु, अरिहंतो होदुं सुगमं ति ॥1॥
सिद्धो सुद्धो जणगो, जणणी सुहदा य तुज्झ जिणवाणी ।
हे मम बंधु ! जाणदु, सिद्धो पुण होदुं सुगमं ति ॥2॥
आइरिओ तुह जणगो, जणणी सुहदा य तुज्झ जिणवाणी ।
हे मम बंधु ! जाणदु, आइरिओ होदुं सुगमं ति ॥3॥
उवझाओ तुह जणगो, जणणी सुहदा य तुज्झ जिणवाणी ।
हे मम बंधु ! जाणदु, उवझाओ होदुं सुगमं ति ॥4॥
मुणिराओ तुह जणगो, जणणी सुहदा य तुज्झ जिणवाणी ।
हे मम बंधु ! जाणदु, मुणिराओ होदुं सुगमं ति ॥5॥

यह लोरी मूलतः हिन्दी भाषा में लिखी गई है और फिर उसका अंग्रेजी अनुवाद भी हो चुका है । प्राकृत भाषा में पहली बार प्रस्तुत की जा रही है । इसके हिंदी अंग्रेजी रूप इस प्रकार हैं-

हिंदी

अरिहन्त पिताजी तेरे, जिनवाणी माता तेरी ।
मेरे भैया ! अरिहन्त सहज है होना ॥
श्री सिद्ध पिताजी तेरे, जिनवाणी माता तेरी ।
मेरे भैया ! श्री सिद्ध सहज है होना ॥
आचार्य पिताजी तेरे, जिनवाणी माता तेरी ।
मेरे भैया ! आचार्य सहज है होना ॥
उपाध्याय पिताजी तेरे, जिनवाणी माता तेरी ।
मेरे भैया ! उपाध्याय सहज है होना ॥
मुनिराज पिताजी तेरे, जिनवाणी माता तेरी ।
मेरे भैया ! मुनिराज सहज है होना ॥

English

Arihanta is your father, Jinvani is your mother.
O' my brother ! It is easy to be Arihant.
Siddha is your father, Jinvani is your mother.
O' my brother ! It is easy to be Siddha.
Acharya is your father, Jinvani is your mother.
O' my brother ! It is easy to be Acharya.
Upadhyaya is your father, Jinvani is your mother.
O' my brother ! It is easy to be Upadhyaya.
Muniraja is your father, Jinvani is your mother.
O' my brother ! It is easy to be Muniraja

संस्कृत-काव्य-रचना

नित्यं ध्यायन्ति योगिनः

ज्ञानानन्दमयं जीवं, शुद्धं चैतन्यलक्षणम् ।

प्रज्ञाछेत्रीसहादेशाद्, नित्यं ध्यायन्ति योगिनः ॥१॥

प्रथमं गुरूपदेशेन, द्वितीयं तर्कसङ्ग्रहे ।

तृतीयं स्वानुभूत्या च, नित्यं ध्यायन्ति योगिनः ॥२॥

प्रमाणनयनिक्षेपैरादौ ज्ञात्वा सुयुक्तितः ।

भेदविज्ञानदृष्ट्या च, नित्यं ध्यायन्ति योगिनः ॥३॥

अत्यन्तोत्साहयुक्तेन, शास्त्रोक्तविधिना यथा ।

नियतकालप्रदेशे च, नित्यं ध्यायन्ति योगिनः ॥४॥

कोऽहं ? को मम धर्मः ?, कः परः परभावो हि ? ।

इति निर्धार्य मनसि, नित्यं ध्यायन्ति योगिनः ॥५॥

ज्ञानानन्दमयं जीवं, शरीराद्भिन्नमेव च ।

ज्ञानैकलक्षणं सिद्धं, नित्यं ध्यायन्ति योगिनः ॥६॥

सर्वशास्त्रैकसद्वाच्यं, सर्वसिद्धान्तसारकम् ।

सुरासुरनृवन्द्यं च, नित्यं ध्यायन्ति योगिनः ॥७॥

अकृत्वा परसन्तापं, अगत्वा खलमन्दिरम् ।

अनुल्लङ्घ्य सतां मार्गं, नित्यं ध्यायन्ति योगिनः ॥८॥

प्रकीर्णकाः

आदिनाथसमारम्भां, कुन्दकुन्दाचार्यमध्यमाम् ।
अस्मदाचार्यपर्यन्तां, वन्दे गुरुपरम्पराम् ॥

हे ज्ञानभास्कर जिनेन्द्र ! नमोऽस्तु तुभ्यं ।
हे शान्तिकारक निशेश ! नमोऽस्तु तुभ्यं ।
हे बन्धनाशक जिनेश ! नमोऽस्तु तुभ्यं । ।
हे मोक्षमार्गप्रतिरूप ! नमोऽस्तु तुभ्यं ।

अहमात्मा परं सर्वं, त्यजामि शुद्धज्ञानतः।
आत्मन्येव सीदामि, विस्मरामि परं जगत् ॥

अहो आत्मा स्वभावेन, सिद्धसदृक् सुज्ञानवान् ।
किन्तु मोहपिशाचेन, वशीभूतोऽभवत् दुःखी ॥

धर्मशब्दकथनेन, प्रायेण प्राणिनोऽधमाः ।
अधर्ममेव सेवन्ते, विचारजडचेतसा ॥

केचित् वदन्ति पापेन सुखिनो भवन्ति
केचित् वदन्ति पुण्यादिक्रियाकलापैः।
ज्ञानिसमूह वदति केवलमेतदेव
ज्ञानेन सर्वे सुखिनो भवन्ति ॥

महावीराष्टक स्तोत्र

मूल(संस्कृत) : पं० भागचंदजी
अनुवाद (हिन्दी) : वीरसागर जैन

जिनके चेतन में दर्पणवत् सभी चेतनाचेतन भाव,
युगपद् झलकें अंत-रहित हो ध्रुव-उत्पाद-व्ययात्मक भाव,
जगत्साक्षी शिवमार्ग-प्रकाशक जो हैं मानों सूर्य-समान,
वे तीर्थकर महावीर प्रभु मम (हम) हिय आवें नयनद्वार ॥१॥

जिनके लोचन कमल लालिमा-रहित और चंचलता-हीन,
समझाते हैं भव्यजनों को वाह्याभ्यन्तर क्रोध-विहीन,
जिनकी प्रतिमा प्रकट शांतिमय और अहो है विमल अपार,
वे तीर्थकर महावीर प्रभु मम (हम) हिय आवें नयनद्वार ॥२॥

नमते देवों की पंक्ति की मुकुट-मणि का प्रभा-समूह,
जिनके दोनों चरण-कमल पर भुवल के देखो जीव-समूह,
सांसारिक ज्वाला को हरने जिनका स्मरण बने जलधार,
वे तीर्थकर महावीर प्रभु मम (हम) हिय आवें नयनद्वार, ॥३॥

जिनके अर्चन के विचार से मेंढक भी जब हषितवान,
क्षणभर में बन गया देवता गुणसमूह और सुखनिधान,
तब अचरज क्या यदि पाते हैं सच्चे भक्त मोक्ष का द्वार,
वे तीर्थकर महावीर प्रभु मम (हम) हिय आवें नयनद्वार ॥४॥

तप्तस्वर्ण-सा तन है फिर भी तनविरहित जो ज्ञानशरीर,
एक रहें होकर विचित्र भी, सिद्धार्थ राजा के वीर-
होकर भी जो जन्म रहित है, श्रीमन फिर भी न रागविकार
वे तीर्थकर महावीर प्रभु मम (हम) हिय आवें नयनद्वार ॥५॥

जिनकी वाणीरूपी गंगा नयलहरों से हीन-विकार,
विपुल ज्ञान-जल से जनता का करती है जग में इसनान,
अहो आज भी इससे परिचित ज्ञानीरूपी हंस अपार,
वे तीर्थकर महावीर प्रभु मम (हम) हिय आवें नयनद्वार ॥६॥

तीव्र वेग त्रिभुवन का जेता काम-योद्धा बड़ा प्रबल,
वयकुमार में जिनने जीता उसको केवल निज के बल,
शाश्वत सुख-शांति के राजा बनकर जो हो गये महान्,
वे तीर्थकर महावीर प्रभु मम (हम) हिय आवें नयनद्वार ॥७॥

महामोह-आतंक शमन को जो हैं आकस्मिक उपचार,
निरापेक्ष बन्धु हैं जग में जिनकी महिमा मंगलकार,
भवभय से डरते संतों को शरण तथा वर गुण-भण्डार,
वे तीर्थकर महावीर प्रभु मम (हम) हिय आवें नयनद्वार ॥८॥

महावीराष्टक स्तोत्र को भाग 'भक्ति' से कीन।
जो पढ़ ले एवं सुने, परमगति हो लीन ॥

श्री पार्श्वनाथ पूजा

(स्थापना)

जिस मन में बसते आज तक, परद्रव्य और विभाव थे ।
उस मन में हे प्रभु ! आपको, पधरा रहा हूँ भाव से ॥
अब आइये, बस जाइये, मम राग-द्वेष भगाइये ।
अरु मुक्तिपथ में कदम मेरे, द्रुत गति से बढाइये ॥
ॐ ह्रीं श्रीपार्श्वनाथजिनेन्द्र ! अत्र अवतर अवतर संवौषट् ।
ॐ ह्रीं श्रीपार्श्वनाथजिनेन्द्र ! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः ।
ॐ ह्रीं श्रीपार्श्वनाथजिनेन्द्र ! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् ।

(अष्टक)

प्रकृति तीर्थकर बँधे वह, भाव भी जब मलिन है।
तब अशुभ की क्या बात, वह तो मलिन से भी मलिन है।
स्वच्छ निर्मल नीर तो बस, वीतरागी भाव है ।
अतएव निर्मल जल चढ़ाता, हूँ प्रभो मैं आपको ॥
ॐ ह्रीं श्रीपार्श्वनाथजिनेन्द्राय जन्मजरामृत्युविनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा ।
लोक में चन्दन-विटप हैं, विपुल मात्रा में खड़े ।
पर आज तक क्या आत्मा को, शांत शीतल कर सके।
छोड़ो उन्हें! छोड़ो उन्हें !! वे, शान्ति दे सकते नहीं।
चैतन्य-चन्दन लेप कर लो, शांति मिलती है सही ॥
ॐ ह्रीं श्रीपार्श्वनाथजिनेन्द्राय संसारतापविनाशनाय चन्दनं निर्वपामीति स्वाहा ।
संयोग तो क्षय होएंगे ही, आत्मा अक्षय महा ।
भवचक्र में पिसकर भी देखो, यह अमर ही रह रहा ।
संयोग को जो देखता, क्षण-क्षण में क्षय वह होयेगा ।
अक्षय अमर होगा वही जो, निज को निज में खोएगा ॥
ॐ ह्रीं श्रीपार्श्वनाथजिनेन्द्राय अक्षयपदप्राप्तये अक्षतं निर्वपामीति स्वाहा ।

यह कामभाव अनिष्टकारी, है जलाता जगत को ।

इससे बचो! इससे बचो!! देखो सदा निज आत्म को ।

कृतकृत्य है यह तत्त्व इसमें, कामना की बात क्या ?

निष्काम चेतन तत्त्व को, परद्रव्य की दरकार क्या ?

ॐ ह्रीं श्रीपार्श्वनाथजिनेन्द्राय कामबाणविध्वंसनाय पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा ।

भूख भोजन से कभी, मिटती नहीं क्या खाइए ।

भूख से बचना हो गर तो, रागभाव निवारिये ।

परद्रव्य को खाया नहीं है, आज तक इक जीव ने।

खा रहे निज राग ही सब, यह कहा जिनदेव ने॥

ॐ ह्रीं श्रीपार्श्वनाथजिनेन्द्राय क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा ।

जीव जाने ज्ञान से दीपक बिचारा क्या करे ?

वह तो स्वयं जड़ रूप है, क्यों ज्ञान को पैदा करे ?

सच पूछिए तो इन्द्रियाँ भी, ज्ञान का कारण नहीं ।

ज्ञान के कर्ता कर्म करणादि सब हैं ज्ञान ही ॥

ॐ ह्रीं श्रीपार्श्वनाथजिनेन्द्राय मोहान्धकारविनाशनाय दीपं निर्वपामीति स्वाहा ।

कर्म तो जड़रूप हैं, परद्रव्य हैं, वे क्या करें ?

सब जीव निज अज्ञान से ही, घोर दुख भोगा करें ।

अतएव निज अज्ञान का ही, दहन करना चाहिए ।

परद्रव्य से तो सर्वथा, दृष्टि हटाना चाहिए ॥

ॐ ह्रीं श्रीपार्श्वनाथजिनेन्द्राय अष्टकर्मदहनाय धूपं निर्वपामीति स्वाहा ।

फल शुभाशुभ राग के सब, कटुक एवं त्याज्य हैं ।

मधुर फल वैराग्य है जो, ज्ञानियों को प्राप्य है ।

सब ज्ञानियों का भोज्य है प्रिय, आत्मज्ञान विराग फल ।

अज्ञानी सब निशदिन भखें शुभ-अशुभ भाव विभाव मल ॥

ॐ ह्रीं श्रीपार्श्वनाथजिनेन्द्राय मोक्षफलप्राप्तये फलं निर्वपामीति स्वाहा ।

जल फलादिक द्रव्य सब परद्रव्य एवं हेय हैं ।

हेय भी क्या वस्तुतः तो, ज्ञानियों के ज्ञेय हैं ।

इनसे नहीं है लाभ किंचित्, इन सभी को भूलिए।

अन-अर्घ्य निज चैतन्य निधि है नित्य उसमें झूलिए।

ॐ ह्रीं श्रीपार्श्वनाथजिनेन्द्राय अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।

(पंचकल्याणक)

गर्भ तो दुखरूप ही होता प्रभो
अर्घ्य क्यों उसको चढ़ाऊँ हे प्रभो ।
किन्तु कल्याणक बनाया आपने
द्वितीय कृष्ण वैशाख प्रभुजी आपने ॥
ॐ ह्रीं श्रीपार्श्वनाथजिनेन्द्राय वैशाखकृष्णद्वितीयायां गर्भकल्याणकप्राप्ताय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।
जन्म तो संसार में सब ले रहे।
किन्तु जन्मों से रहित नहीं हो रहे ।
आपका तो जन्म कल्याणक हुआ।
पौष कृष्ण एकादशी के शुभ दिन हुआ ॥
ॐ ह्रीं श्रीपार्श्वनाथजिनेन्द्राय पौषकृष्णैकादश्यां जन्मकल्याणकप्राप्ताय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।
दुःखरूप आरम्भ परिग्रह त्यागकर
बने मुनि प्रभु यथाजात गुण धार कर ।
पौष कृष्ण एकादशी पावन हो गई
हम सबको भी मुक्ति राह दिखला गई ॥
ॐ ह्रीं श्रीपार्श्वनाथजिनेन्द्राय पौषकृष्णैकादश्यां तपकल्याणकप्राप्ताय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।
निज आत्म में लीन हुये ऐसे प्रभो
उपजा केवलज्ञान सहज ही हे प्रभो ।
चैत्र चतुर्थी कृष्ण पक्ष की थी प्रभो
वीतराग सर्वज्ञ रूप पाया अहो ॥
ॐ ह्रीं श्रीपार्श्वनाथजिनेन्द्राय चैत्रकृष्णचतुर्थ्यां ज्ञानकल्याणकप्राप्ताय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।
घाति अघाति कर्म सभी अब नश गये
सम्यक्त्वादिक सभी आत्मगुण खिल गये ।
श्रावण शुक्ला सप्तमि शुभ तिथि आ गई
अनंत काल को मुक्ति लक्ष्मी मिल गई ॥
ॐ ह्रीं श्रीपार्श्वनाथजिनेन्द्राय श्रावणशुक्लासप्तम्यां मोक्षकल्याणकप्राप्ताय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।

जयमाला

(दोहा)

पार्श्वनाथ जिनराज की, महिमा अपरम्पार ।
जो सम्यक् समझे उसे, उसका बेड़ा पार ॥

(पद्धति ?)

पार्श्वनाथ के पार्श्व में आओ । कमठ वृत्ति सब दूर भगाओ ॥
सप्त व्यसन को छोड़ो भाई । अष्ट मूलगुण धारो भाई ॥

सप्त तत्त्व को जानो भाई । नव पदार्थ पहचानो भाई ।
षट् द्रव्यों को जानो भाई । पंच अस्तिकाया है भाई ॥

क्रोधादिक कषाय चउ तजिए । पांचों पाप भाव परिहरिए ॥
षट् आवश्यक पालन करिये । जिनपूजा गुरुसेवा धरिए ॥

पंच अंग स्वाध्याय करीजे । द्वादश विध संयम आदरिए ॥
द्वादश विध तप अमृत समझो । चार दान की महिमा समझो ॥

सम्यग्दर्शन रत्न गहीजे । अष्ट अंग के संग गहीजे ॥
सम्यग्ज्ञान पंचविध लहिए । तेरह सम्यक् चारित धरिए ॥

ये सब पार्श्वनाथ ने गाया । उनके शिष्यों ने अपनाया ॥
उनके शिष्यों ने अपनाया । मोक्ष सहज जीवन में आया ॥

पार्श्वनाथ उपदेश को, लिया हृदय में धार ॥
दुःख मिटा आनन्द मिला, वन्दन बारम्बार ॥

ॐ ह्रीं श्रीपार्श्वनाथजिनेन्द्राय अनर्घ्यपदप्राप्तये पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।

सब जीव नित धारण करें, समता के इस आनन्द को ।
नहीं दुखी कोई हो कभी, तज दे सभी क्रोधादि को ॥
जगत मंगलरूप ही है, नहीं दुःख की बात कुछ ।
ज्ञाता रहो दृष्टा रहो बस, राग-द्वेष करो न कुछ ॥

इत्याशीर्वादः । पुष्पांजलिं क्षिपेत् ।

तत्त्वज्ञान दोहावली

वीतराग सर्वज्ञ जो, हित उपदेश करंत ।
बार-बार तुमको नमन, हे वृषभादि महंत ॥ १ ॥
यथा तथा रागादि का, करती सदा विनाश ।
वह जिनवाणी माँ करे, मेरे हृदय प्रकाश ॥ २ ॥
तत्त्वज्ञान करके अहो, जो हो गये मुनिराज ।
उनके चरणों में सदा, बारम्बार प्रणाम ॥ ३ ॥
ज्ञान बुरा कोई नहीं, होता है हे मित्र !
तत्त्वज्ञान किन्तु अहो, दे आनन्द पवित्र ॥ ४ ॥
समझो निज औकात को, मत चाहो सब ज्ञान ।
तत्त्वज्ञान पहले करो, वरना मूर्ख महान ॥ ५ ॥
सर्वग्रन्थ पढ़ना चाहौ, पै आयु बुधि हीन ।
यातैं हितकर शास्त्र कछु , पढ़ि पढ़ि बनो प्रवीन ॥ ६ ॥
ज्ञान नहीं सुख भी नहीं, नहीं कोई भी लाभ ।
परपदार्थ के ज्ञान में, सचमुच सदा अलाभ ॥ ७ ॥
निजस्वभाव निजदेश है, विभावादि परदेश ।
सुख मिलता निज देश में, पर घर सदा कलेश ॥ ८ ॥
मन का कालुष दूर हो, दूजे रुचि अपार ।
तीजे नय का ज्ञान हो, समझे आगम-सार ॥ ९ ॥
निश्चय अरु व्यवहार को, भलीभाँति से जान ।
फिर होता मध्यस्थ जो, पाता सम्यग्ज्ञान ॥ १० ॥
पाँच इन्द्रियों के विषय, अरु क्रोधादि कषाय ।
परमशत्रु जो समझ ले, तो ज्ञानी हो जाय ॥ ११ ॥
मिथ्यात्वादि शत्रु हैं, सम्यक्त्वादि मित्र ।
अन्य सभी तो ज्ञेय हैं, कोई न शत्रु मित्र ॥ १२ ॥
हस्ति, मीन, द्विज, पतंग, मृग, इक इक विषयनि सेय ।
मिली मृत्यु क्या हो उन्हें , जो पाँचों को सेय ॥ १३ ॥
गधा कहे कोई तुझे, तो भी समता धार ।
या वह बिल्कुल झूठ या, हुआ अनेकों बार ॥ १४ ॥

हर कीमत पर तुम करो, बन्धु सज्जन संग ।
पर कैसे भी मत करो, क्षणमपि दुर्जन संग ॥ १५ ॥
सोच समझकर काम लो, कीरत दौलत आव^१ ।
मन^२ भर भी थोड़ी रहे, मन भर देवे पाव^३ ॥१६ ॥
दुर्जन सहस पलायेंगे, इक सु युक्ति की मार ।
काक झुण्ड ज्यों भागता, इक पत्थर की मार ॥ १७ ॥
मैंढक करते टर्टर, जहाँ सुनो हे भाई !
चुप होकर वहाँ बैठिए, वरना गरिमा नाहि ॥ १८ ॥
इस लक्ष्मी का दान कर, या कर तू उपभोग ।
वरना बन्धु ! जान ले, ले लक्ष्मी तोहि भोग ॥ १ ९ ॥
परोपकार क्या चीज है, जो कोई पूछे अर्थ ।
रत्नत्रय का दान ही, परोपकार परमार्थ ॥ २० ॥
कुशल वैद्य ज्यों मेटता, बहु रुज औषध एक ।
त्यों इक इक जिनवर वचन, मेटत भ्रान्ति अनेक ॥२१॥
निन्दा निद्रा ये उभय, महा हानिकर चीज ।
इनमें रत पावे नहीं, महा मोक्षफल बीज ॥ २२ ॥
जीवन के हर कार्य में, भावों का है महत्त्व ।
भावशुद्धि पल-पल भजो, यही सार है तत्त्व ॥ २३ ॥
क्षणिक मलिन दुर्गन्धमय, यह शरीर दुखकार ।
इसकी ममता से बना, ये सारा संसार ॥ २४ ॥
जिनपूजा व्रत जप करे , संयम तप स्वाध्याय ।
किन्तु तत्त्वाभ्यास से, रहित मोक्ष नहीं जाय ॥२५॥
वीतराग विज्ञानता, एक हि मेरा मित्र ।
इसको पाऊँ बस सदा, होऊँ परम पवित्र ॥ २६ ॥
देह जाय तो जाय पर , संयम कभी न जाय ।
यही प्रार्थना हे प्रभो ! मरण सफल हो जाय ॥२७ ॥
जिससे रागादिक मिटें, अरु हो आत्म ध्यान ।
वही ज्ञान सच्चा महा, वही ज्ञान विज्ञान ॥२८ ॥
जैसा घातक द्वेष है, वैसा ही है राग ।
राग-द्वेष दोनों तजो, निज को निज में पाग ॥ २९ ॥

सर्व रोग मिटते सहज, जो मिल जाए चार ।
सूर्यकिरण ताज़ी हवा, उष्णोदक अरु प्यार ॥३०॥

बुधजन जी तुम धन्य हो, किया अपूर्व काम ।
छहढाला प्रारम्भ कर, दीने दौलतराम ॥
एक ढाल से सैन्य जन जंग जीत जय पाय ।
छहढाला के मनन से क्यों न शिवपुर जाय ॥

तीर्थकर गणधर करें, जैसा जग उपकार ।
वैसा ही पंडित करे, मानो सब आभार ॥

शब्दार्थ-

1. आयु
2. ४० किलो (बहुत अधिक)
3. २५० ग्राम (थोड़ी-सी)

अमृतवाणी जिनवाणी

वीतराग सर्वज्ञ देव की, अमृतवाणी जिनवाणी ।
अरे भव्य जीवो ! तुम सुन लो, बड़े ध्यान से जिनवाणी ॥ टेक ॥

आकुलता की आग लगी है इस सारे भूमण्डल पर ।
कहीं शांति की बूंद नहीं है एक अहो जगती तल पर ।
चीख-चीख कर मरे जा रहे सभी जगत के अज्ञानी ।
रात-दिवस बेचैन हो रहे, कौन सुने इनकी वाणी ॥
सभी जगत से थककर आवे, जो कोई भविजन प्राणी ।
परमशान्ति का लाभ कराती, उसको माँ श्री जिनवाणी ॥

कहीं सड़क और कहीं स्टेशन पर बुक के स्टॉल लगे ।
उपन्यास आदि में केवल राग-द्वेष के हाल लिखे ।
कागज, समय, शक्ति सब का ही दुरुपयोग ये करते हैं ।
घोर पाप का बन्ध करें और पकड़ नरक में धरते हैं ॥
जहर बढ़ाती जग की वाणी, जहर हटाती जिनवाणी ।
सभी पुस्तकें कूड़ा करकट, मक्खन केवल जिनवाणी ॥

लोग जगत के कुछ कहते कि चीनी मीठी होती है ।
और कहें कुछ चीनी में क्या, मिश्री मीठी होती है ।
इसीलिए वे दिन भर खाते, केवल चीनी-मिश्री को ।
भूल गये वे ज्ञानसुधारस अजर अमर कर देता जो ॥
नीरस हैं वे सभी वस्तुएँ, परम सरस एक जिनवाणी ।
ज्ञानी जन निशदिन पीते हैं, मधुर मधुर यह जिनवाणी ॥

यदि कभी इक पल भी तुमको क्रोध सताने लग जावे ।
मान घेरने लगे और माया भी पीछे पड़ जावे ।
लोभ पाप का बाप बने हास्यादि सभी शत्रु आवें ।
तुम्हें पकड़कर अति दुख देवें और स्वरूप भुला देवें ।
तो तुम जरा याद करना इस वीतराग की वाणी को ।
सकल कषाय रहित कर देगी देखो केवलज्ञानी को ।

उसके कान विफल हैं दोनों जो नहीं सुनता जिनवाणी ।
कानयुक्त भी बहरा है वो जो नहीं सुनता जिनवाणी ।
उसका मानव जन्म विफल है, जो नहीं सुनता जिनवाणी ।
उसे शांति कब ही नहीं मिलती, जो नहीं सुनता जिनवाणी ।
मानव जन्म सफल करते वे, जो सुनते हैं जिनवाणी ॥
उनका तो कहना ही क्या जो सुनकर गुनते हैं जिनवाणी ॥

जिनवाणी के बिना विषय की आग नहीं बुझ पाएगी ।
आग नहीं यह दावानल है सर्व जगत को खाएगी ।
चतुर्गति के जीव सभी, दिन-रात इसी में जलते हैं ।
कोई नहीं बचा सकता है, व्याकुल से व्याकुल रहते हैं ॥
ऐसे में शीतल जल वर्षा, करती है माँ जिनवाणी ।
आग बढ़ाती जग की वाणी, आग बुझाती जिनवाणी ॥

सूर्य चन्द्र में शक्ति नहीं कि इस जैसा प्रकाश करें ।
मिथ्या तम को दूर करे और सकल ताप चकचूर करें ।
चिन्तामणि और कल्पवृक्ष भी सच्चा सुख नहीं दे सकते ।
धन कन की क्या बात अरे ये शाश्वत सुख नहीं दे सकते ।
धन कन कंचन सभी सुलभ हैं दुर्लभ केवल जिनवाणी ।
जी करता है इसीलिए अब घर-घर पहुँचा दूँ जिनवाणी ॥

महावीर पर्वत से निकली गुरु गौतम मुख कुण्ड ढली ।
मोह शिला चकचूर करे अरु जग अज्ञानता हटा चली ।
ज्ञान महासागर में गिरती नयतरंग बहु उछल रही ।
ऐसी जिनवाणी माँ को मैं करूँ प्रणाम रख भाव सही ॥
जग की गंगा नाम की गंगा, सच्ची गंगा जिनवाणी ।
हो पवित्र भवपार चलें तो सच्ची नौका जिनवाणी ॥

हिंसाभाव महादुःखकर है सबसे बड़ा पाप भाई !
प्राण सभी को प्यारे होते उनको मत छीनो भाई ।
दुःख पहुँचाने का भाव भी सचमुच हिंसा ही है हे भाई !
चोरी, झूठ, कुशील, परिग्रह भी हिंसा ही है भाई ।
रागादि की उत्पत्ति ही निश्चय से हिंसा मानी ।
अतः राग भी त्याग बनो तुम वीतराग और विज्ञानी ॥

उत्तम वचन परम औषध है सर्वदुःख हरते प्राणी ।
कुटिल वचन कभी मत बोलो छोटी सी है जिन्दगानी ।
हितमित और प्रिय वाणी ही बोलो प्यारे भवि प्राणी ।
अथवा केवल मौन रहो और बने रहो आत्मध्यानी ॥
सदा अशुभ वचनों से पीड़ित रहते हैं जग के प्राणी ।
सुन्दर सत्य वचन सिखलाती मेरी माता जिनवाणी ॥

महापुरुषों का चरित सुनाती कथानुयोग में जिनवाणी ।
गृहस्थ और मुनिधर्म दिखाती, चरणानुयोग में जिनवाणी ।
जीवों के परिणाम नापती, करणानुयोग से जिनवाणी ।
आत्मधर्म की महिमा गाती, द्रव्यानुयोग में जिनवाणी ॥
चार अनुयोग परम उपकारी, मेरी माँ के जिनवाणी ।
सभी परस्पर मिलजुल रहते, कहती है माँ जिनवाणी ॥

अनेकान्तमय वस्तु रूप को सत्य दिखाती जिनवाणी ।
राग-द्वेष से रहित और जो वीतरागता रस सानी ।
जिसके एक-एक वाक्य में मिलता मोक्षमार्ग मंगलकारी ।
सकल ताप को दूर करे और समीचीन सुख दातारी ॥
जिसको सदा नमन करते हैं, इन्द्र, नरेन्द्र, मुनि ज्ञानी ।
कोई और नहीं है मित्रो, केवल एक श्री जिनवाणी ॥

प्रथम अनादि से परिचित हैं विषयभोग से सब प्राणी ।
श्रुत परिचित अनुभूत सभी को विषयभोग की वही कहानी ।
ऊपर से निशदिन सुनते हैं वैसी ही मिथ्या वाणी ।
उनमें अतः पूर्ण पारंगत हैं जग के ये सारे प्राणी ॥
केवल एक शुद्ध निज आत्म ही दुर्लभ कहते जानी ।
उसे दिखाती हो तुम हमको नमस्कार हे जिनवाणी ॥

मानव तन पाकर विषयों में, रमते हो क्यों भवि प्राणी ।
राख हेतु मत रत्न जलाओ, और सुनो जिनवर वाणी ॥
जिनवाणी सुन दुःख मिटेगा, और मिलेगी सुख की खानि ।
मैं नहीं कहता कहते जिनवर, सुन लो बन्धु खोल के कानि ॥
विषयभोग जी भर-भर देखे, नहीं देखा आत्म जानी ।
अब तो आओ आओ भाई, पढ़ो सुनो सब जिनवाणी ॥

वीतराग सर्वज्ञ देव की, अमृतवाणी जिनवाणी ।
अरे भव्य जीवो ! तुम सुन लो, बड़े ध्यान से जिनवाणी ॥

सपना

कल मैंने इक सपना देखा
सपने में घर अपना देखा ॥टेक॥
उसमें ज्ञान ही ज्ञान भरा था
और साथ आनन्द घना था
उसे ज्ञान की आँखों देखा ॥1॥ कल...
अपना घर तो अपना ही था
सारे जग से न्यारा ही था
मुझको प्राणों से प्यारा था
मैंने वहाँ रत्नाकर देखा ॥2॥ कल...
अपने घर में राग नहीं था
अपने घर में द्वेष नहीं था
वह सब बाहर लोट रहा था
सब विभाव से न्यारा देखा ॥3॥ कल...
ऋषभदेव आदि ने बताया
कुन्दकुन्द स्वामी ने गाया
समयसार में जो दिखलाया
उस अद्भुत आत्म को देखा ॥4॥ कल...
मेरा घर जिनवर को प्यारा
मेरा घर मुनिवर को प्यारा
सकल पंच परमेष्ठी दुलारा
इसको बन्धु ! तुम भी देखो
मैंने इसे सत्य ही देखा ॥5॥ कल...
सपना नहीं, सत्य ही था यह
सपना केवल स्टाइल है
गुरुओं ने दिखलाया है ये
जिनवाणी ने बतलाया है ये
सर्व ज्ञानियों ने यह देखा ॥6॥ कल...

सब ऐसे बनते भगवान

एक दिन मुझको कहे कहान,
जिनवर कहते बनो महान।
हो भगवान बनो महान,
ऐसे बनते भगवान॥

जिनवाणी का सेवन करके,
गुरुओं की सत्संगति करके।
युक्ति का अवलंबन लेके,
निज अनुभव से करो प्रमान॥
सब ऐसे बनते भगवान।

तब आत्म-अनुभव को पाते,
बाहर में सब कुछ देखाते।
पर अन्तर में कुछ नहीं भाते,
रखते केवल निज का ध्यान॥
सब ऐसे बनते भगवान॥

फिर मुनिवर के पद को पाते,
निज वैभव में चित लगाते।
बाहर - भीतर ग्रंथ हटाते,
तन का भी नहीं रखते ध्यान॥
सब ऐसे बनते भगवान।

फिर जिनवर के पद को पाते,
चारों गति में कभी न आते।
सुख अनंत अन्तर में पाते,
प्रगट हो गया केवलज्ञान॥
सब ऐसे बनते भगवान।

बच्चो, तुम भी ऐसा करके,
जिनशासन के पथ पर चलके।
निज आत्म का अनुभव करके,
बन सकते हो सदा महान॥
सब ऐसे बनते भगवान।

छोटा सा मन्दिर बनाएँगे

छोटा सा मंदिर बनायेंगे, वीर गुण गायेंगे ।
वीर गुण गायेंगे, महावीर गुण गायेंगे ॥टेक ॥
हाथों में लेकर सोने का कलशा, प्रभुजी का न्हवन करायेंगे ।
गंधोदक भी लगायेंगे, वीर गुण गायेंगे ॥1॥
हाथों में लेकर गंगा का पानी, प्रभुजी को भेंट चढ़ायेंगे ।
जन्म जरा दुःख मिटायेंगे, वीर गुण गायेंगे ॥2॥
हाथों में लेकर केसर चन्दन, मस्तक पर तिलक लगायेंगे ।
भव आताप मिटायेंगे, वीर गुण गायेंगे ॥3॥
हाथों में लेकर गोला या नारियल, प्रभुजी के चरण चढ़ायेंगे ।
हाथों में लेकर अक्षत चावल, प्रभुजी के चरण चढ़ायेंगे ।
हम तो अनर्घपद पायेंगे, वीर गुण गायेंगे ॥4॥
हाथों में लेकर पुष्पों की माला, प्रभुजी के चरण चढ़ायेंगे ।
काम व्यथा को मिटायेंगे, वीर गुण गायेंगे ॥5॥
हाथों में लेकर प्रासुक व्यंजन, प्रभुजी के चरण चढ़ाएंगे ।
क्षुधा का रोग मिटायेंगे, वीर गुण गायेंगे ॥6॥
हाथों में लेकर सोने का दीपक, प्रभुजी की आरती करायेंगे ।
ज्ञान प्रकाश फैलायेंगे, वीर गुण गायेंगे ॥7॥
हाथों में लेकर धूप दशांगी, प्रभुजी के आगे चढ़ाएंगे ।
कर्मों की धूम उड़ायेंगे, वीर गुण गायेंगे ॥8॥
हाथों में लेकर माँ जिनवाणी, सब को स्वाध्याय करायेंगे ।
धर्म प्रभावना करायेंगे, वीर गुण गायेंगे ॥9॥
हाथों में लेकर पचरंग झंडा, मंदिर के ऊपर फहरायेंगे ।
पञ्च परमेष्ठी को ध्यायेंगे, वीर गुण गायेंगे ॥10॥

जीवन में करिये मत पाप !

आओ भाई आओ बहना !
मान लो तुम सब मेरा कहना ॥
मान लो तुम सब मेरा कहना ।
नहीं पड़ेंगे भव-दुख सहना ॥
यद्यपि मैं छोटा बालक हूँ,
पर जिनवचनों का पालक हूँ ।
मेरे वचनप्रभु का कहना ॥
जीवन में करिये मत पाप
वरना दुख पाओगे आप
इनमें कभी कदम नहीं रखना
इनसे सदा दूर ही रहना ॥
हिंसा दुर्गति की दाता है
नरकों से इसका नाता है
इसकी ओर कभी नहीं बढ़ना ॥ १ ॥
हित-मित-प्रिय वचन ही बोलो
झूठ स्वप्न में भी नहीं बोलो
संभव हो तो मौन ही रखना ॥२ ॥
जो वस्तु अपनी नहीं होवे
भूली गिरी पड़ी या होवे
उसको कभी चुरा नहीं लेना ॥३ ॥
परस्त्री माँ-बहिन समझना
उन पर खोटी नजर न देना
उत्तम ब्रह्मचर्य व्रत रखना ॥४ ॥
परिग्रह चिन्ता दुख बतलाया
सकल पाप का मूल दिखाया
परिग्रह छोड़ बादशाह बनना ॥

पंचेन्द्रिय विषयों से डरना !

आओ भाई आओ बहना !
मान लो तुम सब मेरा कहना ॥
मान लो तुम सब मेरा कहना ।
पंचेन्द्रिय-विषयों से बचना ॥ टेक ॥
एक-एक इन्द्रिय दुखदाई
जिनने सेया मौत ही पाई
इनसे अतः दूर ही रहना
मान लो तुम सब मेरा कहना ॥
देखो हाथी कैसा प्यारा !
किन्तु स्पर्शन ने मारा ।
उससे मिला कूप में गिरना ॥ ॥
मछली कैसी प्यारी लगती !
उसको रसना इन्द्रिय ठगती ।
काँटा खाय तड़फकर मरना॥२ ॥
भौंरा फूलों पर मँडराता
और उसी में बन्द हो जाता ।
घ्राण इन्द्रिय वश मृत्यु पाना॥३ ॥
दीपक पर पतंग गिरता है
और शीघ्र जिन्दा जलता है ।
कारण ? मात्र चक्षु वश होना॥४ ॥
हिरन उछलता फिरता है ।
सुन संगीत आप बँधता है ।
कारण ? मात्र कर्ण वश होना॥५ ॥
उदाहरण ये एक-एक के
किन्तु हम वश हैं पाँचों के ।
सोचो हमें कौन दुख भरना !

तुम नित्य निरन्तर काम करो

काम करो बस काम करो।
तुम नित्य निरन्तर काम करो।
विश्राम एक पल भी न करो।
आलस्य अरि को दूर करो।
काम करो बस काम करो।
तुम नित्य निरन्तर काम करो ॥1॥

कर्तव्यनिष्ठ ही जीता है।
कर्तव्यविरत ही मरता है।
जीना है तो बस काम करो
मरना है नहीं तो काम करो
काम करो बस काम करो
तुम नित्य निरन्तर काम करो ॥2॥

जो कर्म से विचलित होते नहीं।
वे दुखी तनिक भी होते नहीं।
कर्मनिरत तो सुखी सदा
कर्मवीरता तो दुखी सदा।
काम करो बस काम करो
तुम नित्य निरन्तर काम करो ॥3॥

जो तनधन सब कुछ चुक जाये।
कर्तव्यनिष्ठ हम रह पायें
तो इससे बड़ी खुशी है क्या ?
तन धन की कीमत और है क्या ?
इस लिए बन्धु बस काम करो।
तुम नित्य निरन्तर काम करो ॥4॥

बन्दर मामा / पहले मन से तोलो

बन्दर मामा आज पधारे, बनकर के मेहमान।

हमने उनको यूँ समझाया, पकड़ के उनका कान॥

यहाँ तुम्हारी नहीं चलेगी, कोई कारस्तानी।

सावधान होकर बैठो वरना फिर, याद करोगे नानी॥

हमने उनको आसन दीना, और खिलाई खीर ।

पीछे उन्हें पिलाया हमने, ठंडा-ठंडा नीर॥

वे खुश होकर चले गये और अगले दिन फिर आये ।

नज़र बचाकर आज हमारे कमरे में घुस आये ॥

उठा के केले भाग गये वो हम तो बस चिल्लाये ।

घबराते-घबराते मम्मी-पापा दोनों दौड़कर आये ॥

उन्होंने हमको डाँट लगाई, ये क्या कष्ट कमाया।

इस बन्दर को तुम ही ने तो अपने शीश चढ़ाया॥

कल से अपना काम करोगे, नहीं किसी से बोलो।

जो कुछ भी करना हो उसको, पहले मन से तोलो॥

चींटी

एक चींटी मेरे घर आई।
मैंने उसको चीनी खिलाई।
चीनी खाकर चली गई वह।
और दौड़कर फिर आई वह॥

अबकी बार अकेली न आई।
संग हजारों चींटी लाई।
मैंने सबको चीनी खिलाई।
और प्रेम से खीर पिलाई॥

अब तो वे सब प्रतिदिन आती।
आकर के घर में जम जाती।
मुझे भयंकर गुस्सा आया।
मैंने कड़ुवा तेल पिलाया॥

फिर वे अब तक कभी न आई।
उनकी ऐसी हुई विदाई।
पर मम्मी ने दी थी धमकी।
तूने उनकी हिंसा क्यों की ?

मम्मी मैंने हिंसा नहीं की।
केवल उन्हें भगाया था।
मैंने तो केवल अपनी।
तरकीब से काम चलाया था॥

उस पर कोई ध्यान न दो

यदि किसी के घर जाएं हम तो वो देता है वो ही ।
जो उसके घर में होता है और न कुछ देता कोई ॥
इसी तरह से बन्धु विचारो जिसने तुमको गाली दी ।
उसके पास वही थी उसने अतः वही तुमको दे दी ॥
उसके पूरे तन मन में ही नहीं क्षमा की कणिका थी ।
वह उसको कैसे दे देता तुमने क्यों उम्मीद करी ॥
और काम की बात सुनो तुम उसकी ओर देखते क्यों ।
उसका देना उसके आश्रित तुमने उसको लेना क्यों ॥
वह कितना ही देवे बन्धु, लेना तो तेरे आश्रित ।
तू चाहे लेवे न लेवे और रहे अपने आश्रित ॥
एक बार की बात बताऊँ गौतम बुद्ध पधारे थे ।
एक गाँव में तब कुछ प्राणी गाली देने आए थे ॥
गन्दी गन्दी बहुत गालियाँ उन सबने उनको दे दी ।
किन्तु बुद्ध ने साम्यभाव धर उन पर जरा नजर नहीं की ॥
तब वे बोले रे गौतम ! तू विचलित क्यों नहीं होता है ?
हमने तुझे गालियाँ दे दी तू चूप चूप क्यों रहता है ॥
बोले गौतम बुद्ध सुनो तुम सभी ध्यान से मेरी बात ।
गाली देना है तुम आश्रित किन्तु लेना मेरे हाथ ॥
रामनगर में लोग मुझे देने को घी बूरा लाये ।
मैंने तब उसको नहीं लेना बाँट बूँट सबने खाया ॥
अब तुम गाली लेकर आये मैं तो इसको भी नहीं लूँ ।
तुम सोचो अब क्या करना है इसका मैं क्या उत्तर दूँ ?
ये दृष्टांत सिखाता हमको कोई कुछ भी देता हो ।
तुम तो निज में लीन रहो बस ! उस पर कोई ध्यान न दो ॥

हम बच्चे हैं तो क्या हुआ ?

हम बच्चे हैं तो क्या हुआ ? कर्म तो उत्तम करते हैं।
निज आत्म हित की दृष्टि से, जिनधर्म का अध्ययन करते हैं।
प्रतिदिन जिनमन्दिर जाकर के, जिनदेव के दर्शन करते हैं।
जिनदेव के दर्शन पाकर के, निजदेव का दर्शन करते हैं।
अपने जीवन के हर क्षण में, भव का अभाव करते हैं।
बहुत अधिक क्या बतलायँ ? हम सतत मुक्तिपथ पर चलते हैं।।
तुम अपनी बात विचारो तो, बूढ़े हो पापकार्य करते।
आत्म हित की परवाह नहीं, तुम निशदिन गृहचिन्ता करते।
स्वाध्याय की बात तो दूर रहो, तुम सतत विषय इच्छा रखते।
दादाजी मेरी बात सुनो, ज्ञानी निजरूप लखा करते।।

एक कैसेट की अभिलाषा

चाह नहीं मैं चौराहों पर बज लोगों को ललचाऊँ।
चाह नहीं मैं महंगे दामों में बिक लाभ कमाऊँ।।
बड़े-बड़े स्पीकर द्वारा फ़िल्मी गाने कभी न गाऊँ।
चाहे बहुत बिकूँ या अति कम, पर यों रागादिक न बढ़ाऊँ।।
मुझे चाह है केवल इतनी, कुन्दकुन्द को गाऊँ।
कुन्दकुन्द के भजन बनाकर, समयसार घर-घर गूँजाऊँ।।

कविता क्या है

कविता बनाने वाले लोक में अनेक भरे, जिसे देखो वो ही आज कविता बनाता है ।
कविता का रूप क्या है, कवि का सन्देश क्या है, इसका तो A, B, C भी नहीं आता है।
कविता महान है कविता जहान है, रवि से अधिक कवि यूँ ही न कहाता है ।
अन्तस् का अन्धकार दूर कर डालता है, कविता से कवि सर्व लोक को बचाता है।।

आत्मा का हित होगा आत्मा को जानने से

आत्मा का हित होगा आत्मा को जानने से,
आत्मा को जाने बिना कैसे सुख पाओगे ?
आत्मा को जाना नहीं मेरे भैया मेरे सुनो,
चार गतियों के दुःख सतत उठाओगे।
आत्मा ही सार है ये जिनवाणी बोल रही,
शेष है असार कहाँ कहाँ भरमाओगे ?
जानो मेरे भाई जानो निज आत्मा को,
आत्मा को जान के ही शिवपुर जाओगे ॥1॥

अहो भाई ! ध्यानपूर्वक मेरी बात सुनो,
महाभाग्य उदय हुआ जिनधर्म पाया है।
जिनधर्म पाना कोई छोटी-मोटी बात नहीं,
इसके बिना तो सारा जग भरमाया है।
आत्मा को जानने से सुख मिलता है बस,
ऐसा जिनदेव जिनगुरु ने बताया है ।
आत्मा को जानो क्रियाकाण्ड में न फँसो अब,
आत्मा का गति जैनधर्म ने ही गाया है ॥2॥

कुगुरु कुदेव पूजे चिरकाल जग घूमे,
कैसे भी न पल भर सुख स्वाद आया है ।
अपना जो हित चाहो जिनदेव-गुरु ध्याओ,
जिनशासन देखो महाभाग्य उदय आया है।
सुख है अपूर्व महा इसकी न जाति यहाँ,
ये तो सिद्धों का प्यारा शास्त्र में बताया है।
एक बार चखकर देख तो सही रे भाई,
पल में अनंत दुःख राशि को पलाया है॥3॥

चिड़िया भी सुखी होवे जिनधर्म पालने से,
जिनधर्म बिना स्वर्ग में भी दुःख पाता है।
जिनधर्म किसी सम्प्रदाय की बपौती नहीं,
इसे पालने से प्राणिमात्र सुख पाता है।
सर्वज्ञदेव की पुकार सुनो भव्य जीव,
इसके सुने से भव अन्त आ जाता है।
और बात क्या बताऊँ मैं तो अपनी ही गाऊँ,
मेरे हृदय में जिनधर्म नित भाता है।

लोक में अनेक धर्म यत्र-तत्र फैल रहे,
राग-द्वेष में बतावें आत्मा का हित है।
वस्तु का स्वरूप क्या है, ठीक से बतावें नहीं,
पोषते रहें वे मिथ्यात्व निशदिन है।
क्रोध मान माया लोभ आदिक कषायों से,
जलते रहें वे नहिं जाने निजहित है।
उनको जो पूजें सेवें राग-द्वेष पुष्ट करें,
जलते रहें वे राग-द्वेष में ही नित हैं।

आत्माभिव्यक्ति

मैं भक्त हूँ जिनदेव का, सेवक श्री मुनिराज का ।
अभ्यास निशदिन कर रहा हूँ, मैं श्री जिनवाणी का ॥
देह में दिखता भले ही, देह से पर भिन्न हूँ।
रागादि सर्व विकार से, परमार्थतः मैं भिन्न हूँ ॥
ज्ञान दर्शन पूर्ण हूँ, चैतन्य मेरा नाम है।
शक्ति नन्तानन्त मुझमें, वही मम आराम है ॥
मैं अनादिकाल से हूँ, नित्य स्थाई अहो।
पर लोक में तुम सब मुझे बस 'वीरसागर' ही कहो ॥ 1

आओ भाई, आओ भाई ! आकर बैठो मेरे पास।
मेरा परिचय सुनो ध्यान से, तत्त्वज्ञान का होय प्रकाश ॥
मैं चैतन्यतत्त्व ही हूँ बस, जो अजीव से भिन्न सदा।
आस्रव-बन्ध दुःखदाई हैं, मुझसे वे तिरकाल जुदा ॥
संवर और निर्जरा भी निज, आत्मतत्त्व से बाह्य रहें।
मोक्षतत्त्व भी बाह्य तत्त्व है, कुन्दकुन्द आचार्य कहें ॥
सप्ततत्त्व से भिन्न अहो मैं, ज्ञानानन्द स्वभावी हूँ।
पर पर्याय भेद भावों से, भिन्न त्रिकाल अबाधित हूँ ॥2

माना कि मेरी नेत्रज्योति क्षीण होती जा रही,
माना कि मेरी श्रवणशक्ति क्षीण होती जा रही,
माना कि मेरी देह निशदिन जीर्ण होती जा रही,
किन्तु मेरी आत्मशक्ति प्रबल होती जा रही ॥
इन्द्रियाँ तो क्षीण होकर ही रहेंगी,
देह में भी मृत्यु तो आकर रहेगी,
किन्तु मैंने सोचकर निर्णय किया,
कि जिनवाणी की साधना होकर रहेगी ॥ 3 ॥

जिनागम

चिन्तन का आधार जिनागम,
जीवन का आधार जिनागम।
वह क्या चिन्तन वह क्या जीवन,
जिसकी धरती नहीं जिनागम ॥१॥

लेखन का आधार जिनागम,
प्रवचन का आधार जिनागम।
वह क्या लेखन, वह क्या प्रवचन,
जिसकी धरती नहीं जिनागम ॥२॥

पर वे लेखन-वचन दूर हों,
लौंघ रहे जो सतत जिनागम।
ठोस धरातल एक जिनागम,
परम सहायक एक जिनागम ॥५॥

होगा बड़ा अलौकिक चिन्तन,
होगा बड़ा समर्पित जीवन।
पर वे चिन्तन-मनन दूर हों,
जिनकी धरती नहीं जिनागम ॥३॥

जो इसको समझें वे ज्ञानी,
वरना तो सब मूढ़ अज्ञानी।
तातें रोम-रोम में रखिए,
महापौष्टिक सुधा जिनागम ॥६॥

होगी उत्तम लेखन-शैली,
होगी उत्तम प्रवचन-शैली।
जिसकी खूब प्रशंसा फैली,
निकल जाए अभिनन्दन रैली ॥४॥

सोच-समझ कर वचन उचरिये,
पूर्वापर-विरोध से बचिए।
अनेकान्तमय वस्तुरूप को,
स्याद्वाद से कहे जिनागम ॥७॥

छायानुवाद

1. माँ समझे जो परनारी को, अरु परधन को लोष्ठ समान।
सब जीवों की निज सम देखे, पण्डित है बस वही महान ॥
2. हम तो निशदिन आत्मअनुभव में रहें।
साध्यसिद्धि नहीं नातर जिन कहें।
गन्ध नहीं है, रस नहीं है स्पर्श ना।
वर्ण भी मुझमें नहीं मैं चेतना ॥ (समयसारकलश)
3. शक्ति अपरम्पार है मुझमें प्रभो।
जानकर रमकर बनूँ तुमसा प्रभो।
मैं स्वयं ही देव हूँ अपना प्रभो।
सर्वसिद्धि की यही साधना है प्रभो।
4. महावीर से राग नहीं है, कपिलादि से द्वेष नहीं।
जिसके वचन युक्ति संगत हों, उसे मानता मैं सही ॥ (लोकतत्त्वनिर्णय1/38)
5. जिस द्रव्य का जिस क्षेत्र में जिस काल में जिस भाव से
देखा है जिनवर देव ने परिणमन केवलज्ञान से।
उस द्रव्य का उस क्षेत्र में उस काल में उस भाव से,
होता है निश्चित रूप से परिणमन उस ही रूप से ॥(कार्तिकेयानुप्रेक्षा)
6. मोक्षमार्ग के नेता हैं जो कर्मपर्वतों के भेत्तार।
विश्वतत्त्व के ज्ञाता हैं जो उनको मेरा नमस्कार।
नमस्कार का हेतु यही है उनके गुण की प्राप्ति हो।
सम्यग्दर्शन-ज्ञान-चरित से सर्व दुःख की शान्ति हो ॥ (तत्त्वार्थसूत्र, मंगलाचरण)

7. काल अल्प है, बुद्धि मंद है, श्रुतियों का कोई पार नहीं।
जन्म-मरण का नाश करे जो, अतः सीखना उचित वही ॥ (पाहुडदोहा, 99)
8. प्रेम नष्ट हो क्रोध से, मान विनाशे ज्ञान ।
माया मैत्री को हरे, लोभ सकल दुःख खान ॥ (जयधवल, पृष्ठ 369)
9. हालाहल खाकर मर जाना भी एक अपेक्षा से अच्छा है
धधकती ज्वाला में गिरकर राख हो जाना भी अच्छा है
किन्तु आचार्यों की इस बात को सावधानी से समझना होगा कि
तत्त्वज्ञान से रहित जीवन जीना एक दिन भी उचित नहीं । (सुभाषितरत्नसंदोह)
10. जो रोग को दूर न कर सके वह औषध नहीं है
जो प्यास को दूर न कर सके वह पानी नहीं है
जो गरीबी दूर न कर सके वह धन नहीं है
और इसी प्रकार
जो दुःख को दूर न कर सके वह ज्ञान नहीं है । (आदिपुराण)
11. राग से बड़ा कोई बंधन नहीं होता
विषयों से बड़ा कोई विष नहीं होता
क्रोध से बड़ा कोई शत्रु नहीं होता
जन्म-मरण से बड़ा कोई दुःख नहीं होता । (चन्द्रप्रभचरित)
12. स्त्री की शोभा शृंगार से नहीं, सौभाग्य से होती है।
मुनिपद की शोभा तपत्याग से नहीं, ज्ञान-वैराग्य से होती है। (रयणसार, 76)

13.पति, स्वामी, श्रुत, गुरुकृपा, से यदि होवे हीन ।

तिय, सेवक, यति, शिष्यगण, दुर्गति-गमन करेय ॥ (रयणसार)

14.ज्यों कफ में गिर मक्षिका, शीघ्र मृत्यु को पाय ।

त्यों परिग्रह में रत मुनि, नहीं मोक्ष को जाय ॥ (रयणसार, 93)

15.श्रुताभ्यास तो न करे, केवल तप आचार ।

अज्ञानी है वह यति, विषयभोग का यार ॥ (रयणसार)

16.बाह्य परिग्रह रहित तो, निर्धन नर सब होय।

अन्तर परिग्रह त्यागता, लाखों में इक कोय॥ (कार्तिकेयानुप्रेक्षा)

17.पहले मुनिव्रत न कहे, कहे श्रावकाचार।

ऐसे प्रवचनकार को, नहीं उपदेश अधिकार ॥ (पुरुषार्थसिद्ध्युपाय, 18)

जिनवाणी शतक (मुक्तक-संग्रह)

1. हैं भूख बड़ी शैतान कि माता बच्चे तक खा जाती हैं।
हैं भूख बड़ी शैतान कि सारा धर्म कर्म पी जाती हैं।
सारी दुनिया ही ऐसी है जो भूख-प्यास से चलती है।
किन्तु वे मुनिवर धन्य अहो जहाँ भूख भी भूखी मरती है ॥
2. जिनकी देख अचल प्रतिमा को, गिरिवर भी निज मन शरमे।
उन बाहुबली को नमस्कार कर, मेरा तन-मन अति हरषे ॥
3. जिस परिग्रह के पीछे दुनिया निशदिन मरती रहती है
जिस परिग्रह के पीछे दुनिया पाप पुण्य नहीं गिनती है
जिस परिग्रह में अंधे प्राणी भटक भटक दुख भरते हैं
उस परिग्रह को छोड़ संत मुनि निज आत्म में रमते हैं ।
4. जब तक हमारी देह में आवे बुढ़ापा ही नहीं
जब तक हमारे नेत्र में आवे अँधेरा ही नहीं
जब तक हमारे कान भी सुनने लगें ऊँचा नहीं
तब तक हमें ये चाहिए आत्महित कर लें सही ॥
5. एक और असत्य का पूरा सागर है, दूसरी ओर सत्य की एक बूँद है।
एक ओर लाखों मील चलने का ख्वाब है, दूसरी ओर एक कदम की चाल है।
कौन अधिक मूल्यवान हैं इसे समझो मेरे भाई !
एक ओर ऊँची-ऊँची बातों का कोरा क्रियाकाण्ड,
दूसरी ओर क्षणभर शुद्ध ज्ञान कला का प्रकाश है।
6. परम शुद्ध पर्यायों के आगमन की लाइन लग जाती है
अशुद्ध पर्यायों सिर पर पैर रखकर भाग जाती हैं
छोटा मोटा काम नहीं होता यह
जिनदीक्षा लेने पर जीवन की समूची तस्वीर ही बदल जाती है।

7. यदि पढ़ा नहीं परमागम को
यदि पाया नहीं परमात्म को।
मानव तन पाकर किया ही क्या ?
यदि जाना नहीं निजात्म को ॥
8. माना कि तुम धनवान हो, पैसा किसी से कम नहीं।
किन्तु मेरे बंधु बोलो ! क्या तुम्हें कुछ गम नहीं ?
बस इसी से सिद्ध है कि धन में कुछ भी दम नहीं।
देख लो चैतन्यनिधि को जो जिनेन्द्रों ने कही ॥
9. न पाप भला है, न पुण्य भला है,
भला तो बस वो है जो अपने में चला है ॥
10. चाँदनी में प्रकाशित पृथ्वी चाँदनी की नहीं होती।
ट्यूबलाइट में प्रकाशित वस्तुएँ ट्यूबलाइट की नहीं होती।
और आँख से देखी हुई वस्तुएँ आँख की नहीं हो जाती।
उसीप्रकार-
ज्ञान में झलकने वाले चराचर ज्ञेय, ज्ञान के नहीं हो जाते।
11. सब जीव नित बेचैन हैं, बस एक विषय-कषाय से।
शान्ति मिलेगी इसलिए, बस विषय-कषाय अभाव से।
12. एक महिला है
यदि उसे
पिता की निगाह से देखें तो पुत्री दिखेगी।
पति की निगाह से देखें तो पत्नी दिखेगी।
भाई की निगाह से देखें तो बहिन दिखेगी।
पुत्र की निगाह से देखें तो माता दिखेगी।
परन्तु यदि एक
'ज्ञायक' की दृष्टि से देखें तो ज्ञेयमात्र ही दिखेगी।

13. जिसके हृदय में सतत ही गुरुदेव की वाणी रहे।
जो वीतरागी देव का ही अटल श्रद्धाानी रहे।
जो नित्य शान्त एकान्त में, निज रूप का चिन्तन करे।
वह जीव निश्चित रूप से सर्वज्ञ-सुत ज्ञानी बने ॥

14. मैं हिन्दी जानता हूँ, मैं अंग्रेजी जानता हूँ।
मैं शेर को जानता हूँ, मैं सियार को जानता हूँ।
मैं मकान को जानता हूँ, मैं दुकान को जानता हूँ।
मैं घट को जानता हूँ, मैं पट को जानता हूँ।
ऐसा तो बहुत कहते हो, पर कभी यह तो बताओ
क्या जानने वाले को भी जानते हो ?

15. प्यासे को पानी चाहिए,
नवासे को नानी चाहिए,
तीर्थों को दानी चाहिए,
राजाओं को रानी चाहिए,
दुनियाँ की दुनियाँ जाने,
मुझे तो मेरे भैया केवल एक जिनवाणी चाहिए ॥

16. कामनाएँ क्यों करें, है कमी क्या हममें अरे ?
हम तो स्वयं कमनीय हैं, कामना हमसे डरे ॥

17. विज्ञापन खर्चा बढ़ाने के लिए नहीं,
व्यापार बढ़ाने के लिए होना चाहिए।
स्वाध्यायादि क्रियाएँ शुभराग के लिए नहीं,
वीतरागता बढ़ाने के लिए होने चाहिए ॥

18. मिलेगा जो लिखा होगा, तुम्हारे कर्म में जितना।
करो तुम सोच और चिन्ता, तुम्हारे जी में हो जितना।
अनुकूलता प्रतिकूलता भी, कुछ नहीं कर पायेगी।
किस्मत में लिखी दौलत तो छप्पर फाड़ आएगी ॥

19. भोजन भूख में अच्छा लगता है
पानी प्यास में अच्छा लगता है
ख्याति-लाभ में मत उलझो मेरे मित्र !
आत्महित की अभिलाषा में ही स्वाध्याय सफल लगता है।
20. जगत में कोई इष्ट नहीं होता
जगत में कोई अनिष्ट नहीं होता
उधर मत दौड़, इधर देख बटोही !
आत्मा को जाने बिना कोई कभी संतुष्ट नहीं होता।
21. भोजन कितना ही मधुर हो, भूख के बिना अच्छा नहीं लगता
पानी कितना ही शीतल हो, प्यास के बिना अच्छा नहीं लगता ।
ये तो मात्र उदाहरण हैं, अब सिद्धान्त पर आ जाइए
उपदेश चाहे तीर्थकर दें, पर अपनी पात्रता के बिना अच्छा नहीं लगता।
22. चलती है गाड़ी, उड़ती है धूल।
बनती हैं कलियाँ, खिलते हैं फूल।
जाते हैं जंगल, चुभते हैं शूल।
पर को कर्ता मानना, सर्व दुःख का मूल ॥
23. जो जलाकर भस्म कर दे उसे आग कहते हैं
जिसके डसने से लोग मरें उसे नाग कहते हैं।
जो कलंकित करे नर को, उसे दाग कहते हैं।
जो आत्मा को दुःख देता है उसे राग कहते हैं।
24. कोई धन को प्यारा कहता है, कोई तन को प्यारा कहता है।
ज्ञानी तो ऐसा कहते हैं कि धर्म बड़ा प्यारा होता है ॥
25. वहाँ मत बैठिए जहाँ से कोई उठा दे
वहाँ मत जाइए जहाँ से कोई भगा दे
वहाँ मत बोलिए जहाँ कोई चुप कर दे
वहाँ मत सोइए जहाँ कोई जगा दे
वहाँ मत हँसिए जहाँ कोई हँसी उड़ा दे ।

26. क्यों सुनना चाहते हो मित्र गम की दास्ताँ।
सारे जहाँ को देख लो सब ओर सुख के गुलिस्ताँ।
इतना बड़ा जहाँ हैं, क्या हस्ती रखते हैं हम ?
खुशियों का दरिया छलकता बिन्दु सम होते हैं गम।
27. जाना है जब से आत्मा, दुनिया बदल गई।
राग आग लगा है तब से, चैतन्यशान्ति मिल गई ॥
28. सिनेमा में गाने की बात होती है
रसोई में खाने की बात होती है
ध्यान से सुना करो मेरे दोस्तों !
प्रवचन में आत्मा को पाने की बात होती है।
29. स्कूल में पढ़ाई होती है
स्वेटर में कढ़ाई होती है
पहाड़ पर चढ़ाई होती है
राग में लड़ाई होती है।
30. दवाई में मात्रा की बात होती है,
ट्रेन में यात्रा की बात होती है,
मन लगाकर किया करो पुजारी !
पूजा में भी शिवयात्रा की बात होती है ॥
31. नीम कभी मीठी नहीं होती।
नदी कभी जूठी नहीं होती।
कुशास्त्रों की बात नहीं करते हम,
पर जिनवाणी कभी झूठी नहीं होती ॥
32. जो हमसे बड़े हों उन्हें आदर से आप कहते हैं।
जिसके उसने से आदमी मर जाय उसे साँप कहते हैं।
जिनागम के सार को जरा ध्यान से सुनो मेरे मित्र !
मिथ्यात्व को ही जैनदर्शन को सबसे बड़ा पाप कहते हैं।

33. दूध के बिना खीर नहीं बनती।
रंगों के बिना तस्वीर नहीं बनती।
कर्म के भरोसे क्यों बैठे हो भाग्यवादी !
पुरुषार्थ के बिना तकदीर नहीं बनती ॥
34. कण-कण के दर भटक-भटक कर हुये बहुत कंगाल हो।
जबकि मेरे भैया ! तुम तो सचमुच मालामाल हो ॥
35. घी के स्वाद को बोला नहीं जा सकता।
हरीसन के ताले को खोला नहीं जा सकता।
ये तो कदाचित् संभव है परन्तु
आचार्य कुन्दकुन्द की महिमा को तोला नहीं जा सकता ॥
36. मिठाई के बिना पकवान नहीं बनता
पढ़ाई के बिना गुणवान नहीं बनता
व्यापार के बिना धनवान नहीं बनता
वीतरागता के बिना कोई भगवान नहीं बनता ।
37. आज तक हम अनन्त बार मरे
कभी आग से मरे, कभी नाग से मरे
कभी रोग से मरे, कभी शोक से मरे
कभी घानी में मरे, कभी पानी में मरे
और क्या-क्या बताएं ?
भगवान महावीर तो कहते हैं कि
अब एक बार ऐसी आत्मसमाधि से मरो
कि ये मौत ही बेमौत मरे।
38. सावन का महीना हो,
रिमझिम रिमझिम बारिश हो
और मोर न नाचे -ऐसा हो नहीं सकता।
मधुर मधुर बीन बजे
और नागराज न डोलें -ऐसा हो नहीं सकता।

काललब्धि आये, सद्गुरु की देशना सुनने मिले
और सम्यक्त्व न हो -ऐसा हो नहीं सकता।

39. हे भाई मेरी बात सुनो ! जिनधर्म जगत से न्यारा है
जिनधर्म सा कोई और नहीं, ये प्राणिमात्र का प्यारा है।
इसको पा व्यर्थ गमाओ ना, कोई पक्षपात में जाओ ना ।
मन में प्रमाद को लाओ ना, जल्दी शिवपद को पाओ ना !

40. शस्त्र वीर को नहीं, कायर को चाहिए।
वस्त्र विरागी को नहीं, रागी को चाहिए ॥

41. अग्नि को छुओ और हाथ न जले -ऐसा हो नहीं सकता।
हवा चले और पते न हिलें -ऐसा हो नहीं सकता।
सूर्योदय हो और कमल न खिले -ऐसा हो नहीं सकता।
आत्मा को देखो और कर्म न हिले -ऐसा हो नहीं सकता ॥

42. मोची के थैले से चमड़े के टुकड़े निकलते हैं।
दर्जी की टोकरी से कपड़े के चिथड़े निकलते हैं।
ग्लास-फैक्ट्री से काँच के टुकड़े निकलते हैं।
प्रिंटिंग प्रेस में कागज़ के टुकड़े निकलते हैं।
इसमें क्या है? जिसमें जो भरा हो उसमें से वही तो निकलेगा।
आत्मा में देखने से मित्रों ! अनन्त चतुष्टय निकलते हैं।

43. मीठी मिश्री नहीं जिनवाणी होती है।
खट्ठी इमली नहीं, कषायें होती हैं।
कड़वी नीम नहीं, विकथा होती है।
अंधी कोई महिला नहीं, समाज की कुप्रथा होती है ॥

44. सुई के बिना सिलाई नहीं होती
चीनी के बिना मिठाई नहीं होती
डॉक्टर के बिना दवाई नहीं होती

दूध के बिना मलाई नहीं होती
कोई कितनी भी कोशिश क्यों न करो
आत्मज्ञान के बिना अपनी भलाई नहीं होती।

45. एक ओर संसार का भयानक जंगल है तो दूसरी ओर मोक्ष का सुंदर महल है ।
एक ओर कषायों का भीषण दंगल है तो दूसरी ओर स्वभाव का सुखद मंगल है ।
जंगल और दंगल को छोड़ दे मेरे मित्र !
मोक्ष महल में सुखद मंगल मिलेगा ॥

46. पैसा नहीं होगा तो मेरा क्या होगा ?
नौकरी नहीं मिलेगी तो मेरा क्या होगा ?
सम्मान नहीं होगा तो मेरा क्या होगा ?
मकान नहीं होगा तो मेरा क्या होगा ?
दिन-रात यही-यही सोचते हो पापी !
क्या कभी यह भी सोचते हो-
तत्त्वज्ञान नहीं होगा तो मेरा क्या होगा ?

47. जैसे कोई चाय बनाता नोटों की आग जलाकर के
अथवा कोई काग उड़ता दुर्लभ रत्न गंवाकर के
उसीतरह से जो अज्ञानी मानव तन को पाकर के
पंचेन्द्रिय विषयों में रमते खोते सुन्दर जीवन को ॥

48. हो बिना कहे ही बात, वही है सबसे उत्तम बात।
बोलकर करना पड़े तो, मध्यम कहलाती है बात।
अधम बात को क्या बतलाएँ, उसमें होता मन का घात।
मौन रहो या बात कहो, पर त्याग करो तुम अधम बात॥

49. राग-द्वेष ही बड़ा प्रदूषण, राग-द्वेष ही शस्त्र ।
राग-द्वेष के नाश से, पर्यावरण पवित्र ॥
राग-द्वेष से बड़ा जगत में, नहीं प्रदूषण कोई शस्त्र ।
इन्हें मिटाकर जगत बचाओ, हो जाएँगे लाभ सहस्र ॥

50. अहो अहो फिर वही आ गया, दशलक्षण का पर्व ।
आत्मानुभूति होगी अब जो है, दश धर्मों का मर्म ॥
क्षमा मृदु ऋजु शौच मिलेंगे, नसें क्रोध लोभ छल गर्व ।
सत् संयम तप त्याग अकिंचन, और मिलेगा ब्रह्मचर्य ॥
51. जिस वायु से हिमगिरि हिले, तृण शुष्क कैसे टिक सके ?
जिस सरित् में हस्ति बहे, खरगोस कैसे बच सके ?
इस तरह इन्द्रादि भी, जिस काल नहीं बच सके।
हे भाई ! तेरी शक्ति क्या, उस काल से तू क्यों डरे।।
धैर्य रख समभाव रख, परमात्मा का ध्यान कर ।
संयोग तो सब जाएंगे ही, तू तो अपना ध्यान रख ॥
52. पहले मकान कच्चे होते थे, पर आदमी पक्के होते थे
अब मकान पक्के हो गये, पर आदमी कच्चे हो गये ।
पहले दूध होता था, पर बिकता नहीं
अब दूध बिकता है, पर होता नहीं ।
पहले चिकित्सक घर-घर में होते थे, पर रोगी कोई नहीं
अब रोगी घर-घर में हैं, पर चिकित्सक कोई नहीं ।
53. अनन्त दुःखों की बाढ़ थम जाती है
अतीन्द्रिय आनन्द की बहार चली आती है।
एक बार अन्तर्मुख होकर तो देखिए
सामायिक के काल में श्रावक की दशा भी साधुओं जैसी हो जाती है।
54. देखते प्रत्यक्ष हैं, पर बात ये जचती नहीं
देह-चेतन भिन्न ही हैं, गणित ये सीधी सही
किन्तु उनकी समझ में यह आएगा कैसे
जो जानकर भी आत्मा को जानना चाहते नहीं ॥
55. तेरा द्रव्य भी वही है जो अरिहंत का है
तेरा गुणसमूह भी वही है जो अरिहंत का है
जरा रागद्वेष को हटाकर देख भाई !
तेरी पर्याय भी वही है जो अरिहंत की है ।

56. अंधकार को नष्ट करत है सूर्य ज्यों
वारिवाह को नष्ट करत है वायु ज्यों
और वनों को भस्म करत है अग्नि ज्यों
कर्मों को भी नष्ट करे सम्यक्त्व त्यों ।

57. राजा प्रजा पर शासन करता है
अध्यापक छात्रों पर शासन करता है
स्वामी सेवक पर करता है
और भी पता नहीं कौन किस पर शासन करता है
किन्तु ज्ञानी तो एक उसे कहते हैं
जो केवल आत्मानुशासन करता है।

58. दूध और पानी
मिले हुए दिखते हैं,
पर वास्तव में मिले हुए नहीं होते
भिन्न-भिन्न ही होते हैं ।
शरीर और आत्मा भी
मिले हुए दिखते हैं,
पर वास्तव में मिले हुए नहीं होते
भिन्न-भिन्न ही होते हैं ।
फिटकरी डालकर देखो
दूध और पानी अलग-अलग हो जाएँगे,
प्रज्ञा छैनी डालकर देखो
शरीर और आत्मा भी अलग-अलग हो जाएँगे ॥

59. चश्मा एक क्या हजार लगाओ, अंधे को कभी दिख नहीं सकता
माइक एक क्या हजार लगाओ, बहरा कभी सुन नहीं सकता ।
बाहर की चिंता मत करो मित्र, अपना अंदर सुधार लो ।
अंदर के सुधार बिना बाहर की बातों से कुछ नहीं हो सकता ॥

60. शक्ति कायर में नहीं, वीर में होती है ।
ऊर्जा गृहस्थों में नहीं, फकीर में होती है ॥

61. सब प्राणी राग को ही खाते हैं, खीर को नहीं।
सब प्राणी राग को ही पीते हैं, नीर को नहीं।
सब प्राणी आयुक्षय से ही मरते हैं, तीर से नहीं।
सब प्राणी तत्त्वज्ञान से ही तिरते हैं, तकदीर से नहीं ॥
62. कर्म के कार्य को कर्म का समझो
ज्ञान के कार्य को ज्ञान का समझो
और फिर चलने दो यही अभ्यास निरंतर
मोक्ष का मन्त्र है यह, ठीक से समझो ।
63. विष नहीं विषपान बुरा है
दान नहीं अभिमान बुरा है
पर नहीं परलक्ष्य बुरा है
ज्ञान नहीं अज्ञान बुरा है ।
64. अमृत पीने वालों को दाल-भात अच्छे नहीं लगते।
चिदानन्द में रहने वालों को विषय-भोग अच्छे नहीं लगते ॥
65. आम में से आम होगा, आक में से आक ही ।
ज्ञान में से ज्ञान होगा, राग में से राग ही ॥
66. आग नाग सम राग भी, होता दुःख स्वरूप
ज्ञान ध्यान श्रद्धान ही, होते सुख स्वरूप
67. आँधी कितनी ही चले, सुमेरु पर्वत हिला नहीं करते।
विरोधी कितने ही बोलें, आत्मार्थी डिगा नहीं करते ॥
68. करकमलों में दे रहा, हृदयकमल में लीजिए।
मर्म समझकर ग्रन्थ का, भवजल को जल दीजिए ॥

तत्त्वार्थसूत्र-स्तुति

तत्त्वार्थसूत्र सबसे बड़ा, जैन धर्म का ग्रन्थ ।
इसे पढ़ो-समझो सदा, मिले मुक्ति का पन्थ ॥
मुक्तिपन्थ पाकर बढ़े, निज अनुभव आनन्द ।
दुःख मिटे अति सुख मिले, प्रगटे पद निर्ग्रन्थ ॥
फिर श्रेणी चढ़ केवली, बने जीव अरिहन्त ।
घाति-अघाति सब दहे, सिद्ध बसे लोकान्त ॥
धन्य उमास्वामी मुनि, धन्य मोक्ष का शास्त्र ।
सर्व तत्त्व संक्षेप में, कह देता यह शास्त्र ॥
सभी जीव इसको पढ़ें, समझें सब भावार्थ ।
इसीलिए संक्षेप में, लिख दिया यह अर्थ ॥
शास्त्रों का भी शास्त्र है, मोक्षशास्त्र सरताज ।
अध्ययन करते जीव जो, पाते मोक्ष समाज ॥
सब शास्त्रों की कुंजिका, सब शास्त्रों का सार ।
सबसे पहला शास्त्र यह, संस्कृत सूत्र विचार ॥
पूज्यपाद अकलंक अरु, विद्यानंद हैं टीकाकार ।
जिनने इसकी टीकाएँ लिख, मर्म निकाला अपरम्पार ॥
मोक्षमार्ग के नेता हैं जो, कर्मशैल का करें विनाश ।
सर्व तत्त्व को जानें युगपत्, उनको वन्दन करूं त्रिकाल ॥

हे मोक्षशास्त्र ! हमको सन्मार्ग दे दो ।
हे ज्ञानशास्त्र ! हमको सर्वज्ञता दो ।
हे देववाणि ! हमको देवत्व दे दो ।
संसार नाश हमको शिवराह दे दो ।

समवसरण-स्तुति

समान अवसर देता सबको, 'समवसरण' कहलाता है ।
छोटा-बड़ा नहीं है कोई, राग-द्वेष भगाता है ।
समता रस का पान करा कर भव-संताप मिटाता है ।
ऐसा अद्भुत समवसरण प्रभु, मेरे हृदय समाता है ॥